International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030, Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 2; Issue 4; July 2017; Page No. 496-497

संत नितानंद जी के काव्य में नारी

डॉ० बबीता तंवर

विस्तार व्याख्याता, हिन्दी विभाग, राजकीय महाविद्यालय, महम, रोहतक, हरियाणा, भारत।

प्रस्तावना

पूर्व वैदिक काल और वैदिक काल तक नारी को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता रहा। उस समय तक वह अपना बौद्धिक और आत्मिक विकास करने के लिए स्वतंत्र थी एवं शास्त्रों का अध्ययन भी कर सकती थी तथा शास्त्रार्थ में भी हिस्सा ले सकती थी। वैदिक काल की गार्गी, मैत्रेयी और लीलावती आदि विदुषियाँ इसका जीवन्त प्रमाण हैं। केवल यही नहीं नारी के सहयोग के बिना सभी यज्ञानुष्ठान आदि अधूरे माने जाते थे। इस प्रकार वैदिक काल के संदर्भ में यह कहा जाये कि नारी–शक्ति का स्वर्ण युग था तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। मनुस्मृति में तो नारी को देवतुल्य पूजनीय माना गया है–

''यत्र नार्यास्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रौतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्रफलाः क्रियाः।।''[1]

मध्यकाल तक आते–आते नारी के उपर्युक्त रूप में पर्याप्त अन्तर आया। अब नारी का वह स्थान डांवाडोल होता गया और कन्या के जन्म को ही अवांछनीय माना जाने लगा। उसे चंचला, छल–छद्म से परिपूर्ण और अविश्वसनीय तक कहा गया। संतों ने तो उसे माया रूप तथा भगवद् भजन में बाधक माना है, साथ ही इसे दूर रहने को कहा गया है।

संत नितानंद जी कहते हैं–

''नारी प्यारी जगत में, लगे अंग से आय।
ज्ञान ध्यान और प्राण को, नितानन्द भख जाय।।''[2]

संतों ने नारी के कामिनी और भामिनी रूप की भर्त्सना कर उसे साधना के मार्ग में बाधक माना है। इस संदर्भ में नितानंद जी चेतावनी देते हुए कहते हैं–

''नख सिख सभ काला करै, जिसके मारै डंक।
नितानंद बैराग में, नारी बड़ा कलंक।।''[3]

नारी का संसर्ग आराधक–साधक का सर्वस्व हरण कर लेता है। वह उसे पतनोन्मुखी बना देता है। नितानंद जी नारी को नरक का द्वार बताते हैं–

''ज्ञान ध्यान बल बुध हरे, करे भक्ति में भंग।
नरक पडै जन्मैं मरै, कामी कामन संग।।''[4]

केवल साधक ही नहीं इसकी चपेट में जो भी सांसारिक प्राणी आता है। उसकी भी दशा दयनीय हो जाती है। नितानंद जी सांसारिक प्राणियों को चेतावनी देते हुए कहते हैं–

''नारी ना ये नाहरी, करै नैन की चोट।
कठिन चपेटा काम का, दुनिया लोटम लोट।।''[5]

नितानंद जी आगे कहते हैं–

''सुन्दरी कहूँ कि सिंहनी, जिसका जगत् शिकार।
सुर नर पण्डित बहुगुणी, भखे सुन्दरी नार।।''[6]

संतजन नारी को शेर से भी बलशाली मानते है जिसने सारे ब्राह्मण्ड़ को अपने वशीभूत कर लिया है–

''सबल सुन्दरी सिंह ते, दो मुख रही पसार।
नितानंद सभ ब्राह्मण्ड़ को, निगल गई कर प्यार।।''[7]

इस प्रकार की नारी चाहे स्वकीयाहो या परकीया संतजन दोनों से दूर रहने का संदेश देते हैं। वे इसे अग्नि तुल्य मानते हैं–

''क्या अपनी क्या और की, पावक देत जराय।
नितानंद उबरा चाहे, तो हरगिज हाथ न लाय।।''[8]

इन्होंने कहीं इसे फौलाद की छुरी, कहीं मीठी खाण्ड और कहीं जहर कहकर तथा इसे नरक का द्वार बताकर इससे बचने का सन्देश दिया है–

''नारी छुरी फौलाद की, राखी खाण्ड लपेट।
नितानंद जो खायेगा, उसका पाड़ै पेट।।
क्या अपना क्या और का, जहर न लीजै खाय।
नार पराई आपनी, नरक मांहि ले जाय।।''[9]

केवल यही नहीं जहाँ नितानंद जी ने नारी के व्याभिचारी रूप निन्दा की है, वहीं नारी के पतिव्रता रूप की भूरि–भूरि प्रशंसा भी की हैं। इन्होंने पति की सेवा न करने वाली नारी को व्याभिचारिणी कहा है–

''पति की सेवा न करे, नितानंद जो आन।
लोग रिझावै कपट से, सो विभचारन जान।।''[10]

मनसा–वाचा–कर्मणा अपने पति का ध्यान रखने वाली नारी ही पतिव्रता है। इससे भिन्न चंचल मति वाली नारी को इन्होंने व्याभिचारी कहा है–

''जाके चित्त में पति बसै, सोई सुलखनी नार।
जब लग चित जित तित फिरे करे कोटि व्याभिचार।।''[11]

अपने चित्त को सदैव ही अपने पति के लगाये रखने वाली नारी ही पतिव्रता है। भले ही वह मैले वस्त्र धारण किए हुए हो। उसके संदर्भ में नितानंद जी कहते हैं–

''पतिव्रता शोभा भरी, उज्ज्वल अंग अनूप।

मान–गुमान करे नहीं, शीतल सुतह सरूप।।"[12]

तथा–

''पतिव्रता मैले वसन, नहीं आभूषण अंग।
सब जग में जगमग करे, हर हीरा के संग।।''[13]

वे व्याभिचारिणी नारी को नागिन तुल्य मानते है। जो पुरुष ऐसी नारी के साथ वासनारत है उनका अंत निश्चित है। उसका ड़सा व्यक्ति जीवित ही मर जाता है–

''नितानंद नारी डस्या, जीवत ही मर जाय।
आप डसावै आप को, जब क्या पार बसाय।।''[14]

फिर वे कहते हैं–

''नितानंद यह नागनी, भीतर से डस जाय।
जिसका खाया ना बचे, कोटि औषधी लाय।।''[15]

नितानंद जी ने कनक और कामिनी को साधना के मार्ग में बाधक बताया। जिस प्राणी ने इनसे दूरी बनाकर परम तत्त्व परमात्मा का ध्यान लगाया। उसके लिए मोक्ष के कपाट खुले हैं–

''एक कनक और कामिनी, बंके ओघट घाट।
नितानंद इनके परे, खुले रहे मुक्त कपाट।''[16]

नितानंद जी ने केवल दुराचारी नारी को ही आड़े हाथों नहीं लिया बल्कि उन्होंने दुराचारी कामी पुरुष को कुत्ते और गधे से भी निम्न स्तर का कहा है–

''कामी को लज्जा नहीं, ज्यों गदहा और स्वान।
भोगने को त्रिया चहे, क्या अपनी क्या आन।।
कामी से कुत्ता भला, करै समय पर भोग।
नितानंद नर अंध के, लगा रैन दिन रोग।।''[17]

नितानंद जी पतिव्रता नारी के मार्ग को अनुकरणीय एवं वन्दनीय बताते हैं। इन्होंने उसे भी संत तुल्य मानते हुए कहा है–

''पतिव्रता प्रीतम सखा, नितानंद कोई नाहिं।
साहब सो हिलमिल रहे, जुग–जुग चरनों माहिं।।''[18]

फिर वे कहते हैं कि पतिव्रता नारी संमार्ग की ओर अग्रसर करने वाली है और भगवद् भजन करने वाली है–

''पतिव्रता पीव को भजै, पकड़ प्रेम की टेक।
नितानंद गोबिन्द से, मिल गई एकम एक।।''[19]

पतिव्रता नारी और संतों का जीवन तलवार की धार पर चलने जैसा है। वे सांसारिक मोह–माया से कोसों दूर रहकर परम तत्त्व में लीन रहते हैं–

पतिव्रता और संत, जन धरे धार पर पाँव।
तन का लालच त्याग कर, मिलें निरंजन राव।।''[20]

नितानंद जी नारी के संदर्भ में कहते हैं कि उसे माँ, बहन और पुत्री के रूप में देखना चाहिए। उसे आसक्तिजन्य दृष्टि से नहीं अपितु सात्त्विक भाव से देखना चाहिए–

''नितानंद नर–नारि सब, बहन बीर कर देख।
जेते प्राणी जगत् में, सब का पिता आलेख।।"[21]

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि नितानंद जी पतिव्रता नारी को वन्दनीय मानते हैं और व्याभिचारिणी को त्याज्य एवं उससे दूर रहने का संदेश देते हुए उसे माया रूपिणी मानते हैं क्योंकि वह भगवद् भजन में बाधक है। वे पतिव्रता नारी को प्रेम और त्याग की प्रतिमूर्ति तथा सद्गुणों की खान बताते हैं। साथ ही उसे संतों का आदर्श स्वरूप भी माना है। केवल यही नहीं वे उसे संतों के समकक्ष मानते हैं। साथ ही उन्होंने संतों और पतिव्रता के मार्ग को खाण्डे की धार पर चलने जैसा बताया है।

संदर्भ

1. मनुस्मृति, अध्याय–3, श्लोक–57, पृ. 113
2. सम्पा. भोलानाथ प्रज्ञाचक्षु, सत्य सिद्धांत प्रकाश, (कामी का अंग) पृ. 194
3. वही, वही, वही, पृ. 192
4. वही, वही, वही, पृ. 193
5. वही, वही, वही, वही
6. वही, वही, वही, पृ. 197
7. वही, वही, वही, वही
8. वही, वही, वही, पृ. 194
9. वही, वही, वही, पृ. 199
10. वही वही (पतिव्रता का अंग) पृ. 101
11. वही, वही, वही, वही
12. वही, वही, वही, पृ. 103
13. वही, वही, वही, वही
14. वही, (कामी का अंग) वही, पृ. 192
15. वही, वही, वही, वही
16. वही, वही, वही, पृ. 200
17. वही, वही, वही, पृ. 203
18. वही (पतिव्रता का अंग) वही, पृ. 104
19. वही, वही, वही, पृ. 107
20. वही, वही, वही, पृ. 105
21. वही, वही, वही, पृ. 195